समतायोग का अन्तःदर्शन

• *श्रमणसंघीय सलाहकार श्री रतनमुनि*

समतायोग क्या है? - समतायोग क्या है? चिन्तन कर लें। योग आत्मा को परमात्मा से मिलाने वाली शक्ति है। आत्मा के परमात्मा से मिलने के मार्ग में आने वाले आरोह अवरोह, उतार चढ़ाव, विघ्न बाधाओं को समता के माध्यम से पार करना है, इसे हम समतायोग कहते हैं। इस प्रकार समतायोग का अर्थ हुआ समता के माध्यम से आत्मा को परमात्मा से या अपने चरम लक्ष्य से जोड़ने वाला, मिलाने वला योग। समतायोग आत्मा को इस चैतन्य यात्रा में अंतिम लक्ष्य मोक्ष तक पहुँचाने वाला एक यथदर्शक गाइड या भोमिया है जो चैतन्य यात्रा के पथ का चप्पा चप्पा जानता है। भगवद्गीता में 'समत्व योग उच्चते' समता बुद्धि को योग कहा है।

समतायोग का महत्व एवं उपयोगिता - सारा विश्व विषमताओं से घिरा हुआ है। कहीं भी समसूत्र पर स्थित नहीं है। सभी व्यक्तियों के समक्ष प्रत्येक समय प्रत्येक परिस्थिति अनुकुल होती है, वही दूसरे समय में उसके लिए प्रतिकूल हो जाती है। क्या आपने कभी सोचा है कि यह संसार विषम और विकृत क्यों बनता है? उसे विषम बनाने में किसका हाथ है? इसे हम सम बना सकते हैं? संसार अपने आप कोई विषम नहीं है। इसे विषम या विकृत बनाने वाली मनुष्य की दृष्टि है। यदि विषम परिस्थितियों में पले हुए व्यक्तियों के पास में समतायोगी के लिए तो संसार समसूत्र पर स्थित हो जाता है। वास्तव में संसाकर में विषमता राग और द्वेष के कारण होती है। यदि सर्वत्र सभी परिस्थितियों एवं संयोगो में राग द्वेष से दूर रहा जाए तो व्यक्ति के लिए संसार में सम होते देर नहीं लगती। संसार के दो रूप हैं। एक ओर रागरूपी महासमुद्र है तो दूसरी ओर द्वेषरूपी दावानल है। इन दोनों छोर के बीच में जो जो मार्ग हैं। जिससे रागद्वेष दोनों का लगाव नहीं है वह साम्य है, वह समतायोग कहलाता है।

समतायोग राग और द्वेष दोनों से बचाकर आत्मा को समसूत्र पर रखता है। वह मानव जीवन के सभी अटपटे एवं विषम प्रसंगों या प्रश्नों पर समभाव का मंत्र देकर राग-द्वेष से आत्मा की रक्षा करता है। जहां भी जीवन में अमोनोज्ञ, अनिष्ट एवं घृणित पदार्थों या व्यक्तियों का संयोग होगा, वहाँ समतायोग से अभ्यस्त, अनभिज्ञ व्यक्ति, सहसाद्वेष, घृणा, अरुचि या रोष करेगा तथा मनोज्ञ, इष्ट, स्पृश्य आदि पदार्थों के अनुकूल अभीष्ट परिस्थितियों या व्यक्तियों आदि के प्रति वह मन में राग/मोह/आसक्ति या लालसा आदि करेगा तो प्रतिकूल पदार्थों, संयोगों, परिस्थियों या व्यक्तियों के संयोग में तथा अभीष्ट, अनुकूल पदार्थों के वियोग में तिलमिला उठेगा, दुःखित एवं व्यथित हो उठेगा। अभीष्ट कार्य में या प्रचुर साधनों के न मिलने पर उसका मन ईर्ष्या, खिन्नता, उदासी एवं निराशा से भर जायेगा।

समतायोग के सभाव में व्यक्ति के पास प्रचुर धनसाधन, बलबुद्धि, विद्या वैभव आदि होते हुए भी दूसरे के प्रति ईर्ष्या, द्वेष तथा ममता और आसक्ति, अहंकार और मद के अभाव के कारण दुःखित पीड़ित नहीं होता है, जबकि दूसरा प्रचुर मात्रा में वस्तु के होने पर भी दुःखी असंतुष्ट दिखाई देता है। यह सब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुःख और पीड़ा समतायोग के अभाव में होता है। आज अधिकांश लोगों की शिकायत है -संघर्ष, अभाव, असंतोष, दुःख, परेशानी, अशांति, चिंता, रोग क्लेश आदि क्यों है और इसका हल क्या है? यह सब भावना की विषमता से है और इस सबका एकमात्र हल है -समतायोग को अपनाना।

आत्मा और शरीर का स्व और पर का भेद विज्ञान समतायोग से होता है किन्तु जिसके जीवन में यह भेद विज्ञान नहीं होता, वह बात बात में शरीर और शरीर से सम्बन्धित जड़ और चेतन पदार्थों एवं अन्य प्राणियों के प्रति मोह, ममत्व, मूर्च्छा, आसक्ति और मद के कारण चिन्तित, दुखित और बेचैन होता रहता है। इन सबका निष्कर्ष यह ह कि समतायोग के बिना इहलौकिक या पारलौकिक कोई भी समस्या हल नहीं की जा सकती। इसलिए मानव जीवन में खासकर साधक जीवन में समतायोग की पद पर अनिवार्य आवश्यकता है।

समतायोग का उद्देश्य - समतायोग का उद्देश्य साधक को समभाव से ओतप्रोत कर देना है। उसके मन, वचन, काया के व्यवहार व अध्यात्म में समतारस भलीभांति आ जाये तो उसे सांसरिक एवं पौद्गलिक वस्तुओं या बातों में रस नहीं रहेगा, उसके आंतरिक जीवन में क्रोध, मान, माया, लोभ, मोह, राग, द्वेष, अज्ञान, दुराग्रह, मिथ्यात्व, अंधश्रद्धा आदि के त्याग की मात्रा बढ़ती जाएगी। भोगों के प्रति विरक्ति हो, आत्मभावों में स्थिरता बढ़े। यही समतायोग का प्रयोजन है, उद्देश्य है।

समतायोग और भेदविज्ञान - समतायोग का मूल उद्देश्य यह है कि शरीर और शरीर से सम्बन्धित वस्तुओं को लेकर जो मोहमाया, आसक्ति और मूर्च्छा उत्पन्न होती है एवं उसी को लेकर पाप दोषों की वृद्धि होती है उससे बचना। परिवार धनसम्पत्ति, राज्यसत्ता, जमीन जायदाद आदि भौतिक वस्तुओं को लेकर, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, आदि विकार बढ़ते रहते हैं। फिर उन्हीं के कारण कर्म बंध होते हैं। कर्मबंध से छुटकारा पाने के लिए साधना है समतायोग। समतायोग आत्मा को सशक्त बनाने का प्रयोग है। शरीर और आत्मा के भेदविज्ञान से समतायोग सही सधेगा। भेद विज्ञान के अभाव में व्यक्ति बहिरात्मा बनकर शरीर को ही सर्वस्व समझकर उसी की सार में लगा रहता है। शरीर को वह सशक्त बनाना चाहता है, इसके लिए पौष्टिक दवाइयाँ एवं पदार्थ भी सेवन करता है। व्यायाम भी करता है, परुत आत्मिक शक्ति न बढ़ पाने के कारण शारीरिक शक्ति भी नहीं बढ़ पाती। शरीर लक्षी होने से आत्मशक्ति नहीं बढ़ती। आत्मशक्ति के अभाव में वह समत्व की साधना में टिका नहीं रह सकता। जब भी विपरीत परिस्थियों का झंझावत आयेगा वह समत्व से डिग डायेगा। क्योंकि उसको शरीर से जो मोह है। शरीर का बचपन से लेकर बुढ़ापे तक शरीर देखने का अभ्यासु साधक धर्मपालक एवं समत्व साधना के लिए स्वीकृत पथ से डगमगा जायेगा। उसके पैर विपदाओं के घोर बादल देखकर लड़खड़ा जाएंगे। अतः आत्मशक्ति प्राप्त करने के लिए भेदज्ञान आवश्यक है। उसी से साधन प्राप्त होंगे और साधनों से समतायोग में सफलता मिलेगी। आत्मशक्ति प्राप्त होती है या बढ़ायी जा सकती है। आत्मा को सर्वस्व मानकर उसकी अजर, अमरता एवं अविनाशिता पर दृढ़ विश्वास से उसका भेद विज्ञान मूलक सूत्र यही होगा।

"देह मरे मरे, मैं नहीं मरता, अजर अमर पद मेरा।"

इस प्रकार आत्मा को अजर,अमर, अविनाशी मानने वाला साधक ही आत्मशक्ति पाकर अन्त तक विपत्तियों, संकटों एवं आफतों का समभावपूर्वक सामना कर सकता है और उनसे जूझता हुआ समत्वयोग पर अन्त तक टिका रह सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस सब कारणों से भेदविज्ञान और समतायोग का अविनाभावी संबंध है। भेदविज्ञान होगा वहाँ समतयोग अवश्य सिद्ध हो सकेगा और समतायोग होगा वहाँ भेदविज्ञान होना अवश्यम्भावी है।

भेदविज्ञान का संक्षिप्त अर्थ है "यह शरीर मैं हूँ, यह जो जन्म जन्मान्तारों का संसार है, संकल्प है, उसे तोड़ना। यह शरीर भिन्न है, इस प्रकर की भिन्नता का अनुभव होना ही भेदविज्ञान है।

समभाव अध्यात्म दर्शन का सार है। जीवन में जितनी चिन्ता है, विषयभाव है, उसकी उपशांति का सर्वोत्तम भाव है समभाव। यही समत्वयोग का अन्तःदर्शन है।

* * * * *

चिंतन कण

- सत्य एक विशाल वट वृक्ष है उसकी ज्यों-ज्यों सेवा की जाती है त्यों-त्यों उसमें अनेकों फल नजर आने लगते हैं।
- सत्य एक छोटी सी चिनगारी है जो असत्य के पहाड़ को भस्मीभूत करने में सक्षम है।
- असीम अंधकार को दीपक की छोटी सी लौ समाप्त कर देती है। उसी प्रकार झूठ के अम्बार को सत्य की एक चिनगारी धराशयी कर देती है।
- असत्य के काफूर होते ही सत्य की ज्योति प्रकट हो जाती है।
- अम्बर के चमकीले तारों की अपेक्षा धरती के महकते पुष्प को अधिक स्नेह दो।
- सोना आग में तपकर निखरता है। सत्यनिष्ठ मानव में जितना सत्यता का समावेश होता है उतना ही सत्य का भाव उसे आत्मसात होने लगता है।
- सत्य न खरीदने की चीज है: न बेचने की, सत्य तो आचरण में लाने की चीज है।
- सत्य का फल अन्त में मीठा होता है।

• *परमविदुषी महासती श्री चम्पाकुंवरजी म. सा*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org